International Journal of Sanskrit Research 2019; 5(3): 146-148

International Journal of Sanskrit Research

अनन्ता

ISSN: 2394-7519
IJSR 2019; 5(3): 146-148
© 2019 IJSR
www.anantaajournal.com
Received: 17-03-2019
Accepted: 20-04-2019

डॉ. कमलेश कमल
पूर्व गवेषक, संस्कृत–विभाग, पटना विश्वविद्यालय, पटना, बिहार, भारत

Correspondence
डॉ. कमलेश कमल
पूर्व गवेषक, संस्कृत–विभाग, पटना विश्वविद्यालय, पटना, बिहार, भारत

वैदिकवाङ्मय के परिप्रेक्ष्य में ओषधीय वनस्पतियों का विमर्श

डॉ. कमलेश कमल

प्रस्तावनाः

वनस्पतियों से साम्य रखने वाली ऋचाओं का उल्लेख सर्वप्रथम ऋग्वेद में देखने को मिलता है। सभी वनस्पतियाँ फलती–फूलती नहीं और जो फुलती हैं, उन पर फल लगते ही हैं, यह भी आवश्यक नहीं है। औषधीय गुणों वाली ऐसी समस्त वनस्पतियों से प्रार्थना की गई है कि वह उनके समुदाय को रोगों से मुक्त करें वैदिक चिंतकों की मान्यता के अनुसार सृष्टि के सभी तन्त्र अपने–अपने अधिष्ठातृ देवता से सम्बन्धित रहते हैं और वनस्पतियों को उनके औषधीय गुण बृहस्पति देवता से प्राप्त होते रहते हैं। जैसे–[1]

'मुंचन्तु मा शपथ्या इदथो वरुष्यादुत।
अथो यमस्य पड्वीशात् सर्वस्माद् देवकिल्विषात्।।'

ओषधियाँ हमें शापजनित रोगों से मुक्त करने के साक्ष–साथ वरुण देवता के शाप से भी दूर रखें, यम देवता की बेड़ियों से मुक्त रखें, इतना ही नहीं समस्त देव प्रदत्त पापों को हमसे दूर रखें। शास्त्रों में मनुष्य के तीन प्रकार के दुःखों का वर्णन किया गया है– आधिदैविक, आधिभौतिक और आध्यात्मिक।

1. आधिदैविक– दूसरे मनुष्यों अथवा संसार के अन्य प्राणियों द्वारा जो भौतिक कष्ट भोगना पड़ता है, वह आधिदैविक दुःख कहलाता है।
2. आधिभौतिक– सामान्यतः कष्टों की अनुभूति इंद्रियों के माध्यम से की जाती है।
3. आध्यात्मिक– इनके अतिरिक्त कभी–कभी विशुद्ध मानसिक कष्ट भी भोगने पड़ते हैं, जिसे आध्यात्मिक दुःख कहा जाता है।

वस्तुतः दुःख मन के विकारों के कारण पैदा होते हैं जिनका कोई स्पष्ट बाह्य उपाय कारण नहीं रहता। उक्त मंत्र में इन सभी प्रकार के कष्टों से मुक्ति की प्रार्थना की गई है। शापजनित कष्ट उसे कहा जाता है जो दूसरे के द्वारा कर्मणा अथवा वाणी के माध्यम से किसी को पहुंचाया जाता है दूसरे के अहित की भावना भी कदाचित् कष्ट का कारण बन सकती है, उसे मानसिक कहते हैं। जैसे–[2]

'अवपतन्तीरवदन् दिव ओषधयस्परि।
यं जीवमश्मवामहे न स रिष्याति पुरुषः।।'

द्युलोक से पृथ्वी पर आती हुई औषधियाँ बोलती हैं कि जिस जीव को हम व्याप्त या आच्छादित कर लें उस पुरुष का विनाश कभी नहीं होता। प्राक्तन मनीषी वनस्पतियों के औषधीय गुणों को स्वर्ग की देन मानते हैं। पृथ्वी पर होने वाली घटनाएं देवताओं के अधीन होती हैं। अतः औषधियां भी देवों की अनुकम्पा से प्राणियों को प्राप्त होती है। स्वर्ग से आती हुई औषधियां जो कहती हैं उनके अधिष्ठातृ देवता का कथन माना जाता है–[3]

'मावो रिषत्खनिता यस्मै चाहं खनामि वः।
द्विपच्चतुष्पदस्मकं सर्वमस्त्वनातुरम्।।'

औषधि प्राप्त करनेके लिए भूमि खननकर्ता वनस्पतियों को हानि पहुंचाता ही है। कदाचित् प्रार्थना के माध्यम से वह अपनी विवशता व्यक्त करता है, शायद वह यह कहना चाहता है कि अवांच्छित तौर पर वनस्पतियों को नुकसान पहुंचाना उसका उद्देश्य नहीं होता। वनस्पतियों को अनावश्यक रूप से नष्ट नहीं करना चाहता। उसका समूल उच्छेदन नहीं करना चाहता।

उत्खननकर्ता के कार्य को हिंसा के तौर पर न देखना चाहिए। वह प्रार्थना करता है कि औषधियां उससे संबंधित सभी द्विपाद और चतुष्पाद को रोग मुक्त करें। खनन कर्ता निकटस्थ और दूरस्थ वनस्पतियों से प्रार्थना करता है, जो देवताओं से भी तीन युग पूर्व उपस्थित थी तथा उनका भरण पोषण करने वाली औषधियों की संख्या सबसे अधिक बताई गई हैं।

इस भूमंडल पर सर्वप्रथम ओषधियां उत्पन्न हुई थी जो जड़ी बूटियों के रूप में स्थित थी। तदनन्तर तीन युगों के पश्चात् मनुष्य एवं देवताओं की उत्पत्ति हुई। चारों वेदों में अश्विनकुमारों की स्तुतियों एवं उनके द्वारा सम्पादित अनेक औषधि तथा शल्य के विख्यात कार्यो के उल्लेखों से युक्त हैं अश्विनौ जहां औषधियों द्वारा उपचार करते थे वहीं शल्य तथा प्रत्यारोपण कार्यों में भी उतने ही सिद्धहस्त थे। केवल ऋग्वेद में अश्विनदेव से संबंधित मंत्रों की संख्या 634 है। यह संख्या तीनों में प्राप्त शेष मंत्रों की संख्या से कहीं अधिक है। ऋग्वेद में औषधियों के तीन प्रकार बताए गए हैं– दिव्य, पार्थिव और जलीय। जैसे–[4] 'त्रिर्नो अश्विना दिव्यानि भेषजा त्रिः पार्थिवानि त्रिरुदत्तमद्भ्यः।'

शुभ कर्मों के पालनकर्ता अश्विन देव हमें द्युलोक, भूलोक और जलज ये तीन प्रकार की औषधियां तीन बार प्रदान करें। इससे दिव्य पार्थिव एवं जलीय इन तीन प्रकार की औषधियों का ज्ञान प्राप्त होता है। ऋग्वेद में वर्णित 33 देवों में अग्नि, इंद्र, आदि देव की तरह अश्विनौ का वर्णन प्राप्त होता है, जो एक युगल देव हैं।[5] इन्हें देवताओं के भैषजवैद्य के रूप में इनके गुणों का गान किया गया है। अश्विनौ को देवताओं के भैषज न केवल वैदिकसंहिताओं में प्राप्त होता है अपितु, ब्राह्मणों एवं आरण्यको में भी स्वीकार किया गया है। अश्विनौ देवताओं के वैद्य होने के साथ–साथ मनुष्यों की भी चिकित्सा की है।

दिव्य भैषज युगल अश्विनौ के अनेक अद्भुत एवं रोमांचकारी कार्य वेदों में वर्णित है। अश्विनीकुमारों ने कवि ऋज्राश्व, परावृज, कण्व, आदि ऋषियों को नेत्रज्योति प्रदान की। परावृज अंधा एवं पंगु था उसे पंगुत्व रोग से मुक्त करके चलने योग्य बनाया। नारद ऋषि को श्रवण शक्ति प्रदान की। कलि तथा च्यवन को तरुण बनाया। शाहदेव्य और श्यवबंदन को दीर्घायु प्रदान की। दधीचि ऋषि को श्याव के शिर का एक भाग लगाया तथा पठर्वा का पेट ठीक किया और बीमना और बिश्वक की बुद्धि का उपचार किया तथा उन्हें बुद्धिमान् बनाया, इन्द्र को मेष का वृषण लगाए।

अश्विनी कुमारो ने अपने दिव्य उपचार से पृश्रिगु, पुरुकुत्स, दशव्रज अर्जुनेय दधीचि सिन्धु वशिष्ठ नर्य शयु विधन्त आदि पुरुषों को आयुर्वेदिक सहायता प्रदान कर चलने योग्य बनाया। दध्रिमति जो कि निःसंतान थी उसे पुत्रवती बनाया, विमद जो नपुंशक था उसे पत्नी योग्य बनाकर पत्नी प्रदान किया। इन सभी राशियों को भैषज उपचार से आरोग्य प्रदान किया। इस प्रकार दिव्य वैद्य अश्विनौ ने वैदिक युग में सेकड़ों व्यक्तियों का भैषज उपचार करके उन्हें रोगमुक्त स्वस्थ एवं जीवन यापन करने का अवसर प्रदान किया।[6]

अश्विनौ को विभिन्न रोगों से संबंधित औषधियों का ज्ञान था तथा ऋग्वेद में औषधियों को सम्मान दिया जाता था। ऋग्वेद में कहा गया है कि–[7] 'ओषधीरिति मातरस्तद वो देवीरूप ब्रुवे।' अर्थात् औषधियों को माता देवी की संज्ञा से अभिहित किया गया है। ओषधियॉ मातृवत् पालन करने वाली होती हैं। अर्थात् जिस प्रकार एक माता अपने पुत्र को समस्त दुखों से दूर करने का प्रयास करती है, उसी प्रकार ओषधियॉ भी विभिन्न रोगों से दूर करती हैं।

औषधियों को दिव्य शक्तियों को धारण करने के कारण उन्हें देवी की संज्ञा से संबोधित किया गया है। औषधियों में सोम को राजा कहा गया है, क्योंकि सोम एक पेय ओषधि है जो मूञ्जवान पर्वत पर प्राप्त होता है तथा इन्द्र आदि देवों का प्रिय पेय है जिसे पीने के पश्चात् शक्ति प्रबल होने के साथ–साथ स्फूर्ति दायक हो जाती थी। समस्त औषधियां अपने राजा सोम से कहती हैं कि जिस रोगी के लिए ब्रह्मज्ञान धारण करने वाला भैषज हमारी योजना करता है, उस रोगी को हम औषधियों के द्वारा रोग मुक्त कर दिया जाता है। यहां पर शाम का तात्पर्य चंद्रमा से ग्रहण कर सकते हैं, क्योंकि समस्त औषधियां या वनस्पति चंद्रमा से रस तथा शक्ति ग्रहण कर के जीवित रहती हैं जिनसे मानव रोगों के उपचारार्थ प्रयोग की जाती है।

मानव शरीर के विकास के साथ–साथ वातावरण एवं खान पान में परिवर्तन आने के साथ रोग उत्पन्न होने लगते है। जैसे– 'आवश्यकता आविष्कार की जननी है'। मनुष्य ने नए–नए रोगों के उपचारार्थ प्रकृति के अक्षुण्ण भंडार से नई–नई औषधियों का आविष्कार किया और रोगों से मुक्ति पाने का सतत प्रयास करता गया। इसी प्रयास का प्रथम दर्शन ऋग्वेद में प्राप्त होता है। राजा अथवा क्षत्रिय सभा में उपस्थित होते हैं, जहां औषधियां एकत्रित होती हैं, उस विशेष ज्ञानवान् व्यक्ति को वैद्य कहते हैं। वह पैशाची शक्तियों का हनन करने वाला कहा जाता है। औषधियों के सन्दर्भ में ऋग्वेद के दशम मंडल में कहा गया है कि–[8] 'यत्रौषधी समग्मत राजानः समितविव। विप्रः सौच्यते भिषग रक्षोहामीवचातनः।।'

जिस देश में औषधीय ऐसे इकट्ठे होती हैं जैसे राजा लोग संग्राम में एकत्र होते हैं। इन ओषधियों संगमन स्थल पर वह ब्राह्मण वैद्य कहा जाता है। जो राक्षसों का विनाशक होता है अपने सामर्थ्य को देने वाली औषधियों का बल रूग्ण में अपने वीर्य को प्रकट करता है जैसे गाय गोष्ट से प्रकट होती हैं। उसी प्रकार रोग ग्रस्त पुरुष के शरीर में औषधियों का बल उत्पन्न होता है। समस्त औषधियॉ सर्वत्र व्याप्त हैं तथा रोगों पर आक्रमण करती हैं जिस प्रकार चोर मनुष्य धन समूह पर उत्तेजित होकर धावा बोलता है। ऐसा कर के औषधीय गुण शरीर में विद्यमान रोग रूपी पाप को नष्ट कर देते हैं। ऋग्वेद में औषधियों से रोग मुक्ति के लिए प्रार्थना की गई है। जो इस प्रकार है–[9] 'याः फलिनीर्या अफला अपुष्पा या च पुष्पिणीः बृहस्पतिप्रसूतास्ता नो मुंचन्त्वं हसः।।' अर्थात् हे औषधियों जो फल से युक्त हैं तथा जो फल से विहीन है जो पुष्प से रहित हैं तथा जो पुष्पवत् हैं, वह सभी औषधियां बृहस्पतिदेव से अनुज्ञात होकर मनुष्यों को व्यक्ति रूप पाप से मुक्त करें।

भैषज्य के दृष्टिकोण से अथर्ववेद का अत्यधिक महत्व है। अतः इसे भैषज्य वेद भी कहा जाता है। अथर्ववेद में भैषज्य परक मंत्रों की संख्या लगभग 1081 है। अथर्ववेद भैषज्य शास्त्र का मूल आधार है। अथर्ववेद में औषधियों का वर्णन करते हुए कहा गया है कि–[10] 'तत् ते कृणोमि भैषजमं सुभेषजमं।'

औषधियों के द्वारा विभिन्न रोगों की चिकित्सा होती है, अतः इसे भेषज और सुभेषज (उत्तम चिकित्सा) कहा गया है। जिसके माध्यम से विभिन्न रोगों की चिकित्सा की जाती है। 'ओषधिनाम् रसेन..... ....वियक्ष्मेण समायुषा।'[11] ओषधियां जीवन रक्षक होती है और चिकित्सा के प्रमुख साधन हैं।

औषधियों के रस से विभिन्न दवाईयॉ बनाई जाती हैं। रस आयु वर्धक होते हैं जिससे मानव को स्वास्थ्य प्रदान किया जा सकता है। अतएव द्युलोक और भूलोक को औषधियों का पिता और माता बताया गया है। समुद्र जल वर्षा का कारण तथा समुद्र में नाना प्रकार की औषधियां जन्म लेती हैं जो मानव कल्याणार्थ के रूप में प्रयुक्त की जाती हैं।

'या ओषधीः सोमराज्ञीर्बहत्वीः।
सोमरज्ञीर्वहत्वीः शतविचक्षणाः।
बृहस्पतिप्रसूतास्ता नो मुंचन्त्वंहसः।।'[12]

औषधियों को सोमरूपी राजा की रानियां बताया गया है अथवा सोम रूपी चंद्रमा से सामर्थ्य ग्रहण करने वाली सेंकड़ों कार्यों के संपादन में समर्थ एवं सेकड़ों रोगों के निवारण में वैद्य बृहस्पति द्वारा तैयार की गई अथवा वैद्य द्वारा निर्धारित औषधियां हमारी पीड़ा एवं पापं जन्य रोगों को हमसे छुड़ाए अथवा रोगों का परिहार करें।

अथर्ववेद के मंत्रों का आयुर्वेद से सम्बन्ध बताया गया है तथा अथर्व का अर्थ भेषज किया गया है। अथर्ववेद का नाम ब्रह्म वेद भी हैं।

गोपथ ब्राह्मण के अनुसार ब्रह्म शब्द ही भेषज वाचक है। अंगिरस का अर्थ भैषज्य से सम्बद्ध है। रस या रसायन विज्ञान को भी अंगिरस कहा है। अथर्ववेद के औषधि सूक्त में औषधि की परिभाषा एवं प्रकार का विस्तृत वर्णन प्राप्त होता है।

'या बभ्रवोयाश्च शुक्रा रोहिणीरूत पृश्नयः असिक्नीः।
कृष्णा ओषधीः सर्वा अच्छावदामसि।।'[13]

जो ओषधियॉ वीर्यवर्धक, क्षतों को भरने वाली, रस पोषण करने वाली श्याम रंग की, कृष्ण वर्ण की या विलेखन करने वाली ओषधियॉ है, उन सभी की हम प्रशंसा करते हें अथवा जो ओषधियॉ भूरे श्वेत–श्याम एवं कृष्ण वर्ण की है और जो चितकबरीलियों वाली हें एवं पुष्टिकर हैं उन औषधियों के सेवन का उपदेश करते हैं। शाकपूणि ने वनस्पतियों को अग्नि की संज्ञा दी है। वर्तमान समय में वनस्पति शब्द का सामान्य अर्थ वृक्ष रूप में ग्रहण किया जाता है। प्राचीन समय में वृक्ष विरूद्ध वनस्पतियों के मध्य अंतर स्थापित है। वृक्ष शब्द का अर्थ रूढ़ हो जाता है। सुश्रुत संहिता में इन्हीं औषधियों को दो भागों में विभक्त किया गया है– स्थावर और जंगम।

सुश्रुत संहिता में स्थावर औषाधियों को चार भागों में विभक्त किया गया है–

1. वनस्पति– तासु अपुष्पायाश्चुपुष्पिणीफलवन्तों वनस्पतयः।
2. वृक्ष– पुष्पुलवन्तों वृक्षा।
3. विरूध– प्रतानवत्यस्तम्विन्यश्च वीरूधः।
4. औषधि–फल पाकनिष्ठा इति ओषधयः।[14]

जंगम औषधियों को चार भागों में विभक्त किया गया है– जरायुज, स्वेदज, अंडज और उद्भिज।[15]

चरक ने भी उपर्युक्त की तरह पादप जगत् को चार भागों में विभक्त किया है। पादप जगत् का विभाजन लगभग समान है। चरक के द्वारा पादप जगत् का विभाजन इस प्रकार है–

1. वनस्पति– जिसमें फूल के बिना ही फलों की उत्पत्ति होती है। जैसे– गूलर, कटहल।
2. वानस्पत्य–जिसमें फूल के बाद फल लगते हैं। जैसे– आम अमरुद आदि।
3. औषधि– जो फल पकने के बाद स्वयं सूखकर गिर पड़ते हैं, उन्हें औषधि कहते हैं। जैसे– गेहूँ, चना, जौ इत्यादि।[16]

वैदिक मतानुसार औषधियां मानवजीवन से पूर्व भी विद्यमान थी। यह विश्व के प्राचीनतम ग्रंथ ऋग्वेद से भी प्राचीन हैं। औषधियां रोगों से पूर्व ही विद्यमान थी। औषधिशब्द का अर्थ निरुक्त में सायण ने अपने इस प्रकार किया है–[17] 'ओष; पाकः आसुधीयते इत्योषध्यः।' अर्थात् जिनसे फल पकते हैं, उन्हें औषधि कहा जाता है, औषधि ही औषधि कहलाती है। यास्क ने निरुक्ति करते हुए कहा है– 'ओषधय ओषधयंतीति वा ओषत्येना धयन्तीति वा दोषद्यपतन्तीति वा।' अर्थात् जो शरीर में शक्ति उत्पन्न करें, उसे धारण करती है या दोषों को दूर करती हैं वे ओषधियॉ या ओषधि होती है।

शतपथ ब्राह्मण में भी कहा गया हैं–[18] 'ओषम धयति तत् ओषधयः संभवन।' ओषधियां दोषनाशक होती हैं तो औषधियों में त्रिदोष नाशन की क्षमता होती है। ओषधियों में वातावरण के प्रदूषण को भी नष्ट करने की शक्ति रखती है।

ऐतरेय ब्राह्मण में कहा गया है–[19] प्राणो वै वनस्पतिः।' यह वाक्य ऐतरेय ब्राह्मण में तीन बार आया है जो एक महत्वपूर्ण दिशा की ओर संकेत करता है। वनस्पतियां प्राण हैं। कहने का तात्पर्य है कि वनस्पतियां हमारी प्राण हैं। वनस्पतियॉ हमारी प्राणप्रद शक्ति हैं। जिसे वर्तमान परिप्रेक्ष्य में ऑक्सीजन के नाम से जाना जाता है।

सन्दर्भ–सूची–

1. ऋग्वेद– 10.17.16
2. ऋग्वेद– 10.97.17
3. ऋग्वेद– 10.97.20
4. ऋग्वेद– 1.34.6
5. ऋग्वेद– 8.57.2
6. ऋग्वेद– 1.112–119
7. ऋग्वेद– 10 .97.04
8. ऋग्वेद– 10.97.6
9. ऋग्वेद– 10.97.15
10. अथर्ववेद– 2.3.10
11. अथर्ववेद– 3.31.10
12. अथर्ववेद– 6.96.1
13. अथर्ववेद– 8.7.1
14. सुश्रुतसंहिता, पृ0– 7
15. सुश्रुतसंहिता, पृ0– 7
16. चरक संहिता, पृ0– 25
17. निरुक्त– 1.27
18. शतपथब्राह्मण– 2.2.4.5
19. ऐतरेय ब्राह्मण– 2.4.5, 23.7.23